International Journal of Humanities and Arts

ISSN Print: 2664-7699
ISSN Online: 2664-7702
Impact Factor: RJIF 8.00
IJHA 2024; 6(1): 99-101
www.humanitiesjournals.net
Received: 06-04-2024
Accepted: 08-05-2024

रवि कुमार यादव
शोध छात्र, हिन्दी विभाग, उदय प्रताप स्नातकोत्तर कॉलेज, सम्बद्धरू महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी, भारत

Corresponding Author:
रवि कुमार यादव
शोध छात्र, हिन्दी विभाग, उदय प्रताप स्नातकोत्तर कॉलेज, सम्बद्धरू महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी, भारत

सूरदास की कविता में प्रकृति और गोचारण का सौन्दर्य

रवि कुमार यादव

DOI: https://doi.org/10.33545/26647699.2024.v6.i1b.75

सारांश
सूर की कविता का सबल पक्ष लोक और उसकी विविध छवियाँ है। ब्रज के लोक–जीवन की मुक्त और विस्तृत भूमि पर कृष्ण के चरित्र द्वारा सूर–काव्य का वितान विकसित हुआ। सूर की कविता महज हरि–कीर्तन नहीं, उनमें भावनाओं का अपार सागर है। वह प्रेम में आकण्ठ डूबे जीवन जीने की कला है। सूरदास ने पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों को समसामयिक अनुभव के साथ जोड़कर समाज को भाव के साथ जीवन जीने की कला सिखाई। सूर ने कृष्ण–काव्य की परम्परा को आत्मसात कर कृष्ण की लोक–छवि प्रस्तुत की। सहज मानवीय और सामाजिक भूमि पर सूर–काव्य में विकसित कृष्ण का चरित्र विशिष्ट है। ब्रज के लोक–पर्व, लोक–मान्यताएँ और लोक–संस्कार का सृजनात्मक चित्रण सूर–काव्य का वैशिष्ट्य है। ब्रज की चारागाही और पशुपालन की संस्कृति में छिपे लोक–जीवन के विविध पहलुओं को सूर ने अपनी सृजनात्मकता से समृद्ध किया है। लोक–जीवन की अभिव्यक्ति के लिए सूर ने ब्रज–भाषा की लोक–छवियों का वर्णन किया है। मुहावरे, लोकोक्तियाँ और लोक–जीवन में प्रयुक्त शब्दावली का प्रयोग सूर–काव्य की उपलब्धि है।
सूर–काव्य का सबसे सृजनात्मक पक्ष चारागाही और पशु–पालन संस्कृति के चित्रण में दिखाई देता है। सूर चारागाही संस्कृति के सबसे सशक्त कवि हैं। सूरसागर में उन्होंने चारागाही संस्कृति से जुड़े सूक्ष्म से सूक्ष्म चित्र उकेरे हैं। गोचारण ब्रज की संस्कृति एवं लोक–जीवन से जुड़ा पहलू है। कृष्ण के लिए गोचारण विवशता नहीं है, लीला एवं मनबहलाव है। इसी गोचारण के मध्य कृष्ण कई अलौकिक एवं ईश्वरीय लीलाएँ करते हैं। सूरदास इस ईश्वरीय लीलाओं के दबाब में कहीं लोक–कर्म की उपेक्षा नहीं करते, बल्कि यह ईश्वरीय लीला भी कहीं न कहीं लोक–जीवन से ही जुड़ा है। इसी गोचारण के बीच कृष्ण का लोकनायकत्त्व उभरकर सामने आता है। फलतः गोकुल, गायें, यमुना, कदम्ब, बाँसुरी, ग्वाल–बाल, गो–दोहन और गो–चारण सब मिलकर श्गो–चारण और पशु–पालनश संस्कृति को मुकम्मल बनाते हैं। गो–चारण संस्कृति से जुड़े लोक–विश्वास और लोक–मान्यताओं का प्रामाणिक चित्रण सूर–काव्य में मौजूद है। कृष्ण थोड़ा बड़े होते हैं, साथियों को गाय चराते देखकर उनका मन भी मचलता है –
आजु मैं गाई चरावन जैहों
वृन्दावन के भाँति–भाँति फल अपने कर मैं खैहों।

कूटशब्दः गाय, प्रकृति, संस्कृति, चारागाह, पशुपालन, लीलाएं, मुहावरे लोकोक्तियां, आदि।

प्रस्तावना
''प्रकृति मानव की सहचरी है वह उसके जन्म काल से उसके साथ है। आदिम युग में जब मनुष्य सभ्यता और संस्कृति के आलोक से वंचित था, तब प्रकृति और उसकी विभूतिया ही उसके जीवन का आधार थी। वैज्ञानिक विकास के कारण, आज हम प्रकृति से बहुत दूर हो गये हैं। साधारण से भवन के एक–एक कमरे में जीवन यापन करने वाले परिवार को भी किसी लता या किसी फूल के पौधे को गमले में सजाये बिना संतोष नहीं होता अगर कुछ नहीं तो तुलसी का पौधा जरूर हर घर में देखने को मिल जाता है।"[1] इससे यह पता चलता है कि प्रकृति से मनुष्य कितना प्रेम करता है। प्रकृति की गोद में मनुष्य अपने आप को सुरक्षित महसूस करता है।
''सूर को ब्रजभूमि से बहुत ज्यादा लगाव था। ब्रज के सुख के समक्ष दुनिया का कोई भी सुख अच्छा नहीं लगता। ब्रज का जो सौन्दर्य है यमुना नदी का सौन्दर्य, कदम्ब के वृक्ष पर चढ़कर बाँसुरी बजाना गोपियों के साथ जो रासलीला का आनन्द है वह अन्यत्र कही नहीं मिलता। श्री कृष्ण की लीला जो है वह प्रकृति के बिना अधूरी रहती अगर प्रकृति का समावेश नहीं होता तो, जो भाव मन को आनन्दित करता है, वह नीरस लगने लगता। राधा के साथ जो झूला झूलने का आनन्द है, वह कहाँ मिलेगा, यही कारण है कि भक्त ब्रज में जूठन खाकर भी रहने को तैयार हो जाते हैं।"

"इहाँ रहहु जहाँ जूठनि पावहु ब्रजवासिन कै ऐनु।
सूरदास हयाँ की सरवरि नहिं, कल्प वृक्ष सुरधैनु।।''[2]

ब्रज और वृन्दावन की सुन्दरता के सामने स्वर्ग का सुख भी बेकार है। सूरदास ने श्री कृष्ण का बाल–गोपालों के साथ का जो सौन्दर्य वर्णन किया है, वह अपने आप में अद्वितीय है। प्रकृति भी सूरदास की लेखनी के साथ हमेशा मौजूद रही, राधा कृष्ण का प्रथम मिलन भी प्रकृति के प्रांगण में ही हुआ है। दोनो में जब प्रथम मिलन हुआ उस समय वर्षा ऋतु का आगमन होता है –

"गगन गरजि घहराय जूरी घटाकारी।
पवन झकझोर चपला चमक चहुँ ओर।।
सुवन तन चितै नन्द डरत भारी।
कहीं वृषभानु की कुँवारी सौं बोलिकै।।
राधिका कान्ह घर लिये जा री।।[3]

राधा कृष्ण के प्रथम मिलन में प्रकृति भी अपने आप को पूरी तरह से प्रेम की दशाओं के अनुकूल प्रस्तुत करती है। मानो प्रकृति ही सब कुछ करवा रही हो वृन्दावन में चारो ओर सुन्दर फूलों की गन्ध आने लगती है। वृक्ष पर फल लद गये हैं। मोर नृत्य करने लगते हैं। कोयल कूकने लगती है। भौरे गुँजार करने लगते हैं। फूलों के रस को पाने के लिए कृष्ण ग्वाल–बालो के साथ मिलकर यमुना के जल में स्नान करते हैं। और गोपियों को परेशान करने के लिए जब वे पानी में डुबकी लगाती हैं तो उनके कपड़ों को चुरा लेते हैं। फिर कदम्ब के पेड़ पर चढ़कर बाँसुरी की मीठी धुन को बजाते हैं। गोपियों के साथ क्रीड़ा का अवसर जाने नहीं देते हैं। ग्वाल–बालों के साथ जब गाय चराने जाते हैं, तो गायों के ऊपर बैठकर खूब आनन्द लेते हैं।
''सूरदास वृन्दावन को प्रेम का तीर्थ बना देते हैं और कृष्ण के रस में डूबे जीवन का सौन्दर्यगान हो गया। सूरदास के कृष्ण कहते हैं कि वृन्दावन अति भावत कामधेनु सुरतरू सुख जितने रमा सहित बैकुण्ठ भुलवात।"[4]
कृष्ण को वृन्दावन के आगे न कामधेनु प्रिय है न बैकुण्ठ प्रिय है। सूर के राधा और कृष्ण ने लोक हृदय को मानो एक नया आकार दे दिया, उन्होनें प्रेम को आराधना बना दिया है, राधा कृष्ण का जो प्रेम है वह राज महलों में नहीं प्रकृति की आँचल में होता है। धरती की सोंधी माटी, नदी, गाँवों और लता कुंजों के प्राकृतिक पर्यावरण में जन्मा था।
''सूर के काव्य में ऐसा समाज है, जिसमें पशुपालन कृषि व्यवस्था का अंग है और गोचारण किसान जीवन के व्यापक अनुभव का हिस्सा है। किसान जीवन की समग्रता का एक महत्वपूर्ण पक्ष प्रकृति से उसका विशेष सम्बन्ध है।"[5] प्रकृति के ऊपर किसान का पूरा जीवन निर्भर करता है। किसान खेती के साथ पशु पालन भी करता है। यह किसान के जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। सूर के काव्य में अगर गोचारण का प्रसंग आता है, तो उसका मुख्य कारण है किसान जीवन से जूड़े कवि के लिए पशु और प्रकृति की पहचान जरूरी है। गोपाल की लीला के गायक कवि के लिए तो गाय का रूप रंग और स्वभाव में गहरी दिलचस्पी अनिवार्य है। "गायों के रूप रंग और व्यवहार का वर्णन गोचारण प्रसंग में इस तरह हुआ है –

अपनी अपनी गाई ग्वाल सब, आनी करौ इक ठौरी।
धौरी धूमरी राती, रौधी, बोल बुलाई चिन्हौरी
पियरी मौरी, गोरी गैनी खैरी कजरी जेती
दुलही फुलही, भौरी, भूरी, हाँकि, ठिकाई तेती।।"[6]

गायों के नाम रूप और स्वभाव का ऐसा वर्णन उन लोगो को विचित्र लगेगा जो डेयरी का दूध पीकर बड़े हुये हैं। लेकिन गाँव वालों के लिए आज भी गायों के ये नाम सहज आत्मीय हैं।
सूर के काव्य में जिस किसान जीवन का चित्रण है उसका एक विशेष सामाजिक और ऐतिहासिक सन्दर्भ है। सूर के काव्य में ऐसा समाज है जिसमें पशु पालन कृषि व्यवस्था का अंग है और गोचारण किसान जीवन के व्यापक अनुभव का हिस्सा है।
सूरदास के काव्य की कर्म भूमि ग्राम समाज है। जहाँ पर कृष्ण का लीलागान होता है। गोचारण के साथ कृष्ण लीला प्रकृति के गोद में देखने को मिलती है। जहाँ पर गोपियों के साथ रासलीला यमुना स्नान करते समय इनके कपड़ो को चुराना, पनघट पर पानी भरने के समय गोपियों की मटकी को फोड़ना, माखन चुरा कर खाना ये सारी लीलाएँ प्रकृति की गोद में पल्लवित होती हैं। सूरदास के पदों में गाय के स्वभाव का चित्रण देखनें को मिलता है–

"माधौ जू यह मोरी इक गाय है
अब आज तै आप आगै दई लै आइऐ यै चराइ।
फिरती वेद वन ऊख उखारती सब दीन अरूसब राति
हित करि मिलै लेहु गोकुलपति अपने गोधन माह।।"[7]

सूर के काव्य में जिस किसान जीवन का यर्थाथ चित्रण है, उससे अधिक किसान जीवन के अनुभवों का वर्णन है किसान जीवन की पहचान है खेती। किसान कृषि के साथ पशु पालने का भी शौक रखता है। गाय प्रमुखता के साथ हर किसान के घर मिल जाएगी गाय को केवल दूध के लिए नहीं पाला जाता बल्कि उसे मर्यादा के रूप में भी किसान अपने घर पर बाँधता है। उससे समाज में किसान को गर्व महसूस होता है।
सूरदास के कृष्ण लीलागान में गोप ग्वालों के साथ गायें सहज रूप में उपस्थित हैं। गोचारण सूर काव्य का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सन्दर्भ है। श्री कृष्ण चरवाहे के रूप में दिखाए गये हैं। ग्वाल चरवाहों के जीवन में गाय का क्या महत्व होता है, सूरदास इससे पूरी तरह से परिचित है, गायों के स्वभाव तथा उनके विविध प्रकारों से सूरकाव्य भरा पड़ा है।

"आजू चरावन गाइ चलौ जू कान्ह कुमुद धन जोये
सीतन कुंज कदम की छहियां हाक छछूँ रस खैये
अपनी अपनी गाइ ग्वाल सब आनि करौ इक ठौरी
धौरी धुमरी राति रौंछी बगेलि बुलाइ चिन्हौरी।।[8]

सूरदास के काव्य प्रकृति एवं गोचारण का सौन्दर्य बहुत आकर्षक एवं असीम है। "सूर के काव्य में ऐसा समाज है जिसमें पशु पालन कृषि व्यवस्था का अंग है और गोचारण किसान जीवन के व्यापक अनुभवों का हिस्सा है। सूर की कविता में ब्रज की लोकसंस्कृति के साथ प्रकृति भी व्यक्त हुई है।"[9]
सब मिलाकर सूर में प्रकृति–चित्रण के जितने प्रकार संभव हैं उनके सभी उदाहरण मिल जाते हैं। वस्तुतः सूर का काव्य अपने नाम के अनुरूप एक विशाल सागर है, जिसमें असंख्य भाव रत्न और प्राकृतिक दृश्य चित्रण की अनमोल निधियाँ भरी पड़ी हैं। "हमें सूर की वर्णन शक्ति पर आश्चर्य होता है। उनकी उपमाओं की नवीनता हमें बराबर मोह लेती हैं। गोचारण प्रसंग में जीव जगत के अनेक ऐसे अछूते चित्र हमें देखने को मिलते हैं, जिनका अन्य कवियों में अभाव है।''[10] सूर का प्रकृति वर्णन हमारे ग्राम्य जीवन की छवियों को लिए हुए है और उसमें हमारा तत्कालीन जन जीवन मुखरित हो उठा है।
आचार्य शुक्ल के अनुसार दृ "समाज के विकास के साथ पशुचारण काव्य का भी विकास हुआ है। कृषि तथा व्यापार के युगों में भी गोचारण काव्य रचा जाता है। क्योंकि कृषि और व्यापार के व्यवस्थाओं से उपजी जटिलताओं से निकलकर प्रकृति के स्वच्छंद वातावरण में विचरने की मानवीय आकांक्षा की अभिव्यक्ति का एक माध्यम है गोचारण काव्य।''[11]

तात्पर्य यह है कि गोचारण काव्य सामंती एवं पूँजीवादी समाज में जटिल बंधनो से मानव मन की मुक्ति में सहायक बनता है। इस तरह कभी–कभी मानव समाज के इतिहास के सुदूर अतीत की स्मृति भी भविष्य की संभावनाओं की तलाश में मनुष्य की मदद करती है। आधुनिक युग में किसी न किसी रूप में गोचारण काव्य की रचना का यही रहस्य है।

"भारतीय काव्य में गोचारण काव्य की परम्परा यूरोप के समान सघन एवं समृद्ध नहीं है। यहाँ वैसी निरंतरता भी नहीं है। फिर भी यहाँ जो है वह गोचारण संबंधी ग्वाल गीतों के रूप में मिलता है। जबकि यूरोप का पशु चारण काव्य मुख्यतः गड़ेरियों के गीतों से जुड़ा हुआ है। हिंदी में गोचारण काव्य की झलक केवल सूरदास के काव्यों में दिखाई पड़ती है।"[12]

निष्कर्ष

ग्राम समाज में लोक अनुभव और लोक कला के पुराने रूप बहुत दिनों तक जीवित रहते हैं। सूर के काव्य में गोचारण का जो भाव आता है यह सब अतीत के अनुभव की स्मृति है। उनके गोचारण गीतों में ग्वाल बालों के गीतों की अनुगूँज मौजूद है। मैनेजर पाण्डेय का कथन है कि "सूरदास का काव्य अपने समय और समाज से जुड़ा हुआ काव्य है।"[13]

सूर के काव्य में प्रकृति का विशेष महत्व है क्योंकि यह काव्य लीला की रंगभूमि है, गोचारण के साथ कृष्ण लीला प्रकृति के स्वच्छंद परिवेश में प्रवेश करती है।

सूर ने प्रेम को अपने काव्य में जीवन में महानतम् मूल्य के रूप में उपस्थित किया है। "सूरदास प्रकृति से एक से बढ़कर एक उपमा लाते हैं। उस युग में प्रकृति की उपस्थिति आज की तुलना में ज्यादा थी। वन, खेत, लता, कुँज, पशु–पक्षी, यमुना, पनघट, गाय, मोर, हिरण ये सब प्रकृति की शोभा हैं, जो सूरदास के सौंदर्य बोध को प्रतिबिंबित करती है।"[14]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, हरबंसलाल, 2015, सूरदास, राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 204
2. शर्मा, हरबंसलाल, 2015, सूरदास, राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 205
3. शर्मा, हरबंसलाल, 2015, सूरदास, राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 206
4. नाथ, शम्भु, 2023, भक्ति आन्दोलन और उत्तर धार्मिक संकट, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 328
5. पाण्डेय, मैनेजर 2022 भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 294
6. पाण्डेय, मैनेजर 2022 भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 296
7. पाण्डेय, मैनेजर 2022 भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 294
8. पाण्डेय, मैनेजर 2022 भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 296
9. पाण्डेय, मैनेजर 2022 भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 303
10. शर्मा, हरबंसलाल लाल, 2015, सूरदास, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ 213
11. पाण्डेय, मैनेजर, 2022, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ 292
12. वहीं पृष्ठ 294
13. वहीं, पृष्ठ 303
14. नाथ, शंभु, 2023, भक्ति आन्दोलन और उत्तर धार्मिक संकट, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ 253।